International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493
Received: 21-02-2023, Accepted: 09-03-2023, Published: 24-03-2023
Volume 5, Issue 1, 2023, Page No. 14-15

भारतीय संत साहित्य में धर्म और दर्शन

डॉ. ज्ञानी देवी गुप्ता
असिस्टेंट प्रोफेसर, गुरू काशी विश्वविद्यालय, तलवंडी साबो, पंजाब, भारत

सारांश
संतों के काव्य में धर्म एवं दर्शन चित्रित करने से पहले संत शब्द के अर्थों को जानना अनिवार्य है वास्तव में संत शब्द के विषय में विभिन्न मत्त है। पीताम्बर दत्त बडथ्वाल ने संत शब्द का अर्थ शांत बताया है। परशुराम चतुर्वेदी ने संत शब्द का अर्थ वह व्यक्ति माना है जिसने सत् रूपी परम तत्त्व को आत्मसात कर लिया हो और परम तत्त्व का अनुभव कर चुका हो वही संत कहा जाता है।

मूल शब्दः धर्म, दर्शन, संत, भक्तिकाल, धार्मिक, दार्शनिक, संस्कृति, उपमान

हिन्दी साहित्य का स्वर्ण युग कहे जाने वाले भक्तिकाल का आरम्भ एकाएक ही नहीं हो गया था। मध्ययुग का यह समय जब देश में एक तरफ युद्ध हो रहे थे। उसी समय देश में भक्ति की लहर चलनी आरम्भ हो गई। वास्तव में संतों की साधना अपने युग की विषम समस्याओं का समाधान थीं। जिसने युद्धों से हताश जनता में धार्मिक एवं दार्शनिक विचारों के माध्यम से नए प्राण फूकें। भक्ति की इस लहर को चलाने में नाथ सम्प्रदाय के गुरू गोरखनाथ और चौरासी सिद्धों ने धरातल तैयार किया। ये अपनी इस विचारधारा को समस्त उत्तर भारत में फैलाने में सफल हुए। इनकी यही धार्मिक और दार्शनिक विचारधारा आगे चलकर कबीर, नानक दादू, रैदास, बुल्लेशाह आदि संतों की वाणियों से प्रकट हुई। डॉ. गोबिन्द त्रिगुणायत ने संतों की वाणी के सम्बन्ध में कहा है कि ''संतों की रचनाएं सहज काव्य की विभूति है।''1 संतों के काव्य में धर्म एवं दर्शन चित्रित करने से पहले संत शब्द के अर्थों को जानना अनिवार्य है वास्तव में संत शब्द के विषय में विभिन्न मत्त है। पीताम्बर दत्त बडथ्वाल ने संत शब्द का अर्थ शांत बताया है। परशुराम चतुर्वेदी ने संत शब्द का अर्थ वह व्यक्ति माना है जिसने सत् रूपी परम तत्त्व को आत्मसात कर लिया हो और परम तत्त्व का अनुभव कर चुका हो वही संत कहा जाता है।

डा. नगेन्द्र के अनुसार ''इस युग के संत कवि ईश्वर की सत्ता और सर्वशक्तिमत्ता में अटूट विश्वास रखने के कारण अत्यंत निर्भीक, स्पष्टवादी, साहसी, सत्यावादी थे।''2 डॉ. बलदेव वंशी मानते हैं कि संतों की संस्कृति, वेदना, संवेदना की संस्कृति है यथार्थ की धरती पर अवतरित अध्यात्मक भाव की संस्कृति है। घोर कष्टों, संकटों, अभावों और उपमानों को सहकर दूसरों को उठाने, खड़ा करने और उन्हें सदमार्ग दिखाने का महाकर्म है। संतों का जीवन।''3

धर्म

एक रहस्य है संवेदना है, संवाद है और आत्मा की खोज है। धर्म स्वयं की खोज का नाम है धर्म अनंत और अज्ञात में छलांग लगाना। धर्म है जन्म, मृत्यु और जीवन जानना। असल में धर्म का अर्थ सत्य, अहिंसा, न्याय, प्रेम व्यक्तित्व स्वतंत्रता और मुक्ति का मार्ग माना जाता है।

दर्शन

जो ज्ञान की व्यास रखते हैं वे सब दार्शनिक हैं। जो व्यक्ति सभी प्रकार का ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा रखता है और सदैव सीखने के लिए उत्सुक रहता है, कभी संतुष्ट नहीं होता और सीखता रहता है वास्तविक रूप में वह दार्शनिक है।

संतकाव्य में धर्म एवं दर्शन

मध्यकालीन काव्य साधना, योग साधना और भक्ति साधना में संत साहित्य का बहुमूलय स्थान है इन्होंने जाति–पाति, छुआ–छूत, सामाजिक विषमता पाखंड, जीव हिंसा, भोगवाद, अंधविश्वास अथवा मानवता विरोधी प्रवृतियों के प्रति विद्रोह संतों ने अपने काव्य के माध्यम से किया। यह साहित्य मन हृदय और आत्मा को तृप्त करने वाला साहित्य है। मध्यकाल में काव्य की अनेक धाराएँ निसृत हुई। भक्तिकाल में ज्ञानमार्ग, प्रोममार्गी, सगुण और निर्गुण नामों से अभिहित इन धाराओं ने जहाँ एक ओर भारतीय जनता में भक्ति की लहर प्रवाहित की वहीं अपने धार्मिक तथा दार्शनिक विचारों से लोगों में धर्म तथा दर्शन प्रति नवीन दृ ष्टिकोण जाग्रित किया। हिन्दी में संत साहित्य धार्मिक, दार्शिनक और विषयों पर आधारित है, इसमें जीवन की भावनाओं का वर्णन है। संत कवियों में धर्म तथा दर्शन सम्बन्धी दृष्टिकोण को देखते हुए शुक्ल ने इसे निर्गुण ज्ञानाश्रयी, रामकुमार वर्मा ने संत काव्य परम्परा के नाम से अभिहित किया है। इस परम्परा में कबीर, नानक, दादूदयाल, रैदास का विशेष स्थान है, साथ ही दयाबाई, पीपा साहिब, भीखा साहब पलटू आदि के नाम आते है। संत काव्य परम्परा के सभी कवियों ने ईश्वर को निर्गुण और निराकार माना है, बहदेववाद का विरोध, साधु संतों की संगति को धार्मिक पाखण्डों तथा आडम्बरों का विरोध किया। जाति–पाति विरोध के साथ–साथ माया से सावधान रहने की चेतावनी देते हुए कबीरदास ने लोक कल्याण की भावना पर भी बल दिया। कबीर के धर्म तथा ईश्वर सम्बन्धी विचारों पर स्वामी शंकराचार्य के अद्वैतवाद का स्पष्ट प्रभाव है। ये जीव और ब्रह्म की पूर्ण एक्ता में विश्वास रखते थे। संत कबीर का ब्रह्म अद्वैत से अधिक प्रभावित है। कबीर ने अपने निर्गुण और निराकार ब्रह्म को प्रकृति के कण–कण में विराजमान माना है। कबीर के अनुसार निर्गुण ब्रह्म अव्यक्त है और किसी भी वाणी से परे है, कबीर ने आत्मा को परमात्मा का एक अंग स्वीकार किया है कबीर के जगत सम्बन्धी विचारों पर अद्वैत का ही प्रभाव रहा है उन्होंने ब्रह्म को सत्य और जगत को मिथ्या परिलक्षित किया है। कबीर अद्वैतवाद से प्रभावित होने के कारण माया को भी मिथ्या रूप में ही स्वीकार करते हैं और भौतिक सुखों को त्याग कर नाम स्मरण पर बल देते है। उनके अनुसार परम तत्व की खोज ही हमारा लक्ष्य होना चाहिए। कबीर ने धार्मिक संकीर्णताओं की बेड़ी काटकर मानव धर्म को ही महत्त्व दिया जैसे.

''तू कहता कागद की लेखी।
मैं कहता आखिन की देखी''4

गुरू नानक देव जी की धार्मिक विचाराधारा अनुसार

''सचु ता परू जाणीए जा रिदै सच होई।
कूड की मलु उतरै तनु करै हछा धोई।"[5]

गुरू नानक देव जी ने उस समय समाज में प्रचलित व्यवहार का खण्डन किया तथा नवीन आचार विचार का संदेश दिया। उन्होंने सच्ची कमाई मिल बांटकर खाने एवं नाम जपने (सच्ची किरत, बंड छकना, नाम–जाप) का संदेश दिया। उन्होंने मनुष्यता को एम धर्म, एक परमात्मा का संक्लप देकर लोगों में नरक स्वर्ग के भय को दूर करने में योगदान दिया। उन्होंने परमात्मा को अपने भीतर ढूंढने की संकल्पना से परिचित करवाया। मनुय को अपने भीतर ही प्रमात्मा के दर्शन करने के लिए प्रेरित किया। गुरू नानक ने लोगों को वनों में जाने की बजाय संसार में रह कर पारिवारिक सुख भोगते हुए प्रमात्मा को पाने का मार्ग दिखलाया।

''जैसे जलु महि कमलु निशलमु मुरगाई नौ साणै।
सुरति सबद भव सागरू, तरीअै नानक नाम विखणै।

सिक्ख सम्प्रदाय के प्रर्वतक गुरू नानक देव जी भी एकेश्वरवाद के प्रबल समर्थक तथा जाति–पाति के कट्टर विरोधी थे। साधु–संगति में असीम विश्वास रखते थे। गुरू नानक की वाणी में मानव की सदाचारी, परोपकारी तथा निम्र बनने की शिक्षा दी गई है। दादू दयाल पर कबीर कर विशेष प्रभाव पड़ा पर इन्होंने कबीर की तरह खण्डन मण्डन नहीं किया ये सरलता और सादगी में विश्वास रखते थे। धार्मिक अनुभूति के साथ–साथ मानवतावाद में इनकी अटूट आस्था थी। दादू ने गुरू के महत्त्व को बहुत माना छूआछूत का खण्डन किया। संतों के समय जात पात के बन्धन अत्यंत कठोर हो गए थे। निम्नजाति के लोगों को समाज के सब अधिकारों से वंचित रखा जा रहा था। समाज में शुद्धों का स्थान सबसे नीचा था। समाज में छुआछूत का भेदभाव उत्तरोतर बढ़ता चला गया। संतों ने इस अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाई। संत दादू ने सभी को एक आत्मा बताकर धुआधूत का विरोध किया दादू के अनुसार :

''दादू पूर्ण ब्रह्म विचारिए, तब सफल आत्मा एक।
काया के गुण देखिए, तो बाणा बरण अनेक।''[6]

संत रैदास के अनुसार समाज में कोई भी व्यक्ति अच्छा या बुरा नहीं है। अर्थात सब कर्मों का खेल है। कर्म ही इन्सान को बड़ा बनाते हैं। रेदाव के अनुसार संत का अर्थ ही है– साधन–सुविधाओं को त्याग कर आत्मोन्नयन हेतु अंतरिक शुद्धि का सतत प्रयास।

''संत संतोष अरू सदाचार, जीवन का आधार।
रैदास भए नर देवते, जिन त्यागे पंच विकार।''[7]

संत रैदाव ने समस्त मनुष्य जाति को अपने हृदय में दया भाव का स्थान देने का उपदेश दिया। ओर ये तभी सम्भव है जब मनुष्य अपनी इन्द्रियों को वश में कर लेता है। संत दादू ने धर्म के प्रति अपने विचारों को धरती पर विचरते सभी जीवों के सतत प्रवाह को कायाम रखने के चिंतन को सद्विचार को आगे बढ़ाया। उनका प्रसिद्ध कथन है,

''आप मेटे हरि र्भाज तन मन तजै विकार।
निर्वैरी सब जीव सू। दाइ यह मत सार।[8]

संतों के समय जातीय व्यवस्था ने बहुत विकराल रूप धारण किया हुआ था। संतो ने पूरी मानव जाति को एक मानते हुए जाति प्रथा का विरोध किया। संत रैदास के शब्दों में

''जात–जात में जात है जो केलन के पात
रविदास न मानुष जड़ सके, जो लो जात न जात।"[9]

संतां के समय लोग धर्म का मार्ग भूल चुके थे। संत समाज में अवतारवाद के कारण मूर्तिपूजा का प्रचलन बढ़ता जा रहा था। समाज अशिक्षित होने के कारण अंध विश्वास ने अपने पैर पसार लिए थे। लोग ईश्वर और सच्चे धर्म को भूलकर पथ्थरों की पूजा करने लगे थे। ऐसे समय में संतों का लक्ष्य सामाजिक एकता की प्रतिष्ठा करना था। संत रैदस के अनुसार

तुरक मसीति अल्लाह ढूंढह, देहरे हिंदु राम गुसाई
रविदास ढूढिया राम रहीम कूं जल मसीत देहरा नाहीं

निष्कर्ष

वर्तमान समाज में भ्रष्टाचार, घृणा, राजसत्तात्मक अत्याचार प्रफुल्लित हो रहा है। इस समय इन संत कवियों के धर्म दर्शन को जीवन में अपनाने की आवश्यकता है। इन संत कवियों के विचार मनुष्यता के लिए आध्यात्मिक संदेश, क्रांतिकारी प्रवचन के रूप में आत्मिक उन्नति का ठोस यतन है। सच सुख की अनुभूति शरीर के भीतर ही व्याप्त परम तत्त्व से साक्षात्कार में है। इसके लिए उस परमतत्त्व के प्रति पूर्ण समर्पण युक्त प्रेम का सोपान निर्धारित है जिसके माध्यम से उस तक जीव की पहुँच सम्भव है जब ईश्वर शरीर के भीतर है तो बाहर ढूँढने से उसकी प्राप्ति कैसे सम्भव है। इस प्रकार संतों ने बाहरी आडम्बरों को नकारा और सहज–धर्म साधना की प्रतिष्ठा का मार्ग प्रशस्त किया।

संदर्भ सूची

1. डॉ. राम कुमार गुप्त, गुजरात का हिन्दी संत साहित्य, पृ. 210
2. डा. नगेन्द्र, डा. सुरेशचन्द गुप्त, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 1976, पृ. 284
3. द्विवेदी, आचार्य हजारीप्रसाद, कबीर, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1999, पृ. 61
4. बेदी, हरमहेन्द्र सिंह (डॉ.) (संपादक), गुरूवाणी, प्रकाश, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 199, पृ. 36
5. सं. परशुराम चतुर्वेदी, दादूदयाल ग्रंथावली, नागरी पंचारिणी सभा वाराणसी, पृ. 274
6. शर्मा, डॉ. शमीम (संपादक) 'पंचनाद' डॉ. बलदेव वंशी का आलेख, पृ. 127
7. वही, पृ. 33
8. आचार्य पृथ्वी सिंह 'आजाद', रविदास दर्शन, श्री गुरू रविदास संस्थान, चण्डीगढ़, प्रथम संस्करण, 1973, पृ. 130